

शारीरिक शिक्षा में योग दर्शन की भूमिका

डॉ० जितेन्द्र यादव

असि० प्रोफेसर (दर्शनशास्त्र)

महामाया राजकीय महाविद्यालय महोना, लखनऊ

मोबाइल : 9336586375

ई-मेल : jeetenyadava@gmail.com

भोध सारांश :

शारीरिक शिक्षा की उच्च शिक्षा में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है और यह विद्यार्थियों के मध्य लोक प्रिय विषय भी है। शारीरिक शिक्षा केवल शरीर के स्वस्थ रहने तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास कर उनका सामाजिक समायोजन करने में भी मदद करती है। यह अनेक नेतृत्व के गुणों एवं अनुशासन का विकास करती है। शारीरिक शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति में योगदर्शन की शिक्षा प्रदान करना अत्यंत सहायक होता है। योगदर्शन शारीरिक शिक्षा के अनेक घटकों का परिपूरक बनता है। योगदर्शन के द्वारा शरीर एवं मन के बीच स्वस्थ का विकास होता है। योगदर्शन से शरीर की विभिन्न क्रियाएं केवल शरीर तक सीमित नहीं रह जाती हैं बल्कि इससे यह भाव प्रगाढ़ होता है कि मन के अनुशासन के बिना शरीर की कुशलता कहीं पहुँचती नहीं है। प्रस्तुत शोधपत्र में हम योगदर्शन के संक्षिप्त परिचय द्वारा यह प्रदर्शित करेंगे कि योगदर्शन शारीरिक शिक्षा को परिपूर्ण करता है तथा विद्यार्थियों के समग्र विकास में सहायक होता है।

मुख्य शब्द – योग, चित्तवृत्ति, प्राणायाम, अष्टांग योग, चित्त भूमि।

डा० राधाकृष्णन एवं महात्मा गाँधी दोनों ने ही शिक्षा के लक्ष्यों पर विचार करते हुए यह मत व्यक्त किया है कि शिक्षा विद्यार्थी का समग्र विकास करती है, शिक्षा के द्वारा विद्यार्थी में अंतर्निहित संभावनाओं का विकास होता है।

योगदर्शन के प्रणेता पतंजलि माने जाते हैं, इसी कारण इस दर्शन को पातंजल-दर्शन भी कहते हैं। योग के मतानुसार मोक्ष की प्राप्ति ही जीवन का चरम लक्ष्य है। मोक्ष की प्राप्ति के लिए विवेक ज्ञान को ही पर्याप्त नहीं माना गया है, बल्कि योगाभ्यास पर भी बल दिया गया है।

मोक्ष की प्राप्ति का तात्पर्य दुःखों का पूर्ण अभाव होता है। विद्यार्थी जीवन में मोक्ष की प्राप्ति को हम तनावों के ऊपर विजय प्राप्त करने से संयुक्त कर सकते हैं, विद्यार्थियों के ऊपर अनेक प्रकार का दबाव यथा – कैरियर, सामाजिक, पारिवारिक आदि होता है। योगदर्शन के ज्ञान एवं योग के अभ्यास द्वारा विद्यार्थी अपनी चित्तवृत्ति पर नियन्त्रण कर तनाव पर नियंत्रण कर सकता है। योगदर्शन चित्तभूमि, अर्थात् मानसिक अवस्था के भिन्न-2 रूपों में विश्वास करता है। व्यास ने चित्त की पाँच अवस्थाओं, अर्थात् पाँच भूमियों का उल्लेख किया है – (1) क्षिप्त (2) मूढ (3) विक्षिप्त (4) एकाग्र (5) निरुद्ध।

क्षिप्त चित्त की वह अवस्था है जिसमें चित्त रजोगुण के प्रभाव में रहता है। इस अवस्था में चित्त चंचल एवं सक्रिय रहता है, इसमें ध्यान केन्द्रित नहीं रहता है। इसमें इन्द्रिय एवं मन पर संशय नहीं रहता है।

मूढ़ चित्त की वह अवस्था है जिसमें तमोगुण का आधिक्य रहता है, इसमें निद्रा, आलस्य की अधिकता रहती है।

विक्षिप्त अवस्था में ध्यान कुछ समय के लिए स्थिर हो जाता है परन्तु टिक नहीं पाता है। एकाग्र चित्त की वह अवस्था है जिस पर सत्त्वगुण का प्रभाव रहता है, इसमें चित्त देर तक स्थिर रहता है।

निरुद्धावस्था चित्त का पाँचवा रूप है। इसमें विषयों से ध्यान हटाकर एक विषय पर ध्यान लगाया जाता है। इस अवस्था में चित्त की सम्पूर्ण वृत्तियों का निरोध हो जाता है।

किसी भी विद्यार्थी के लिए अपने चित्त को सब ओर से समेट कर शिक्षा पर ध्यान लगाना अत्यंत आवश्यक है, योगदर्शन विद्यार्थी के ध्यान ध्यान लगाने में सहायता प्रदान कर सकता है। योग शब्द 'युज्' धातु से बनता है जिसका अर्थ है समाधि। पंतजलि ने योग को चित्तवृत्ति निरोध बताया है।¹ चित्त का अर्थ है – अन्तःकरण। योग में बुद्धि, अहंकार, और मन इन तीनों को मिलाकर 'चित्त' नाम दिया जाता है। चित्तवृत्तियाँ पाँच प्रकार की होती हैं— 1) प्रमाण 2) विपर्यय 3) विकल्प 4) निद्रा 5) स्मृति। प्रमाण सत्य ज्ञान है – प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द। विपर्यय मिथ्या ज्ञान है जैसे रज्जुसर्प का ज्ञान, संशय भी इसी के अन्तर्गत है, विकल्प शब्द ज्ञान से उत्पन्न होने वाला सत्यवस्तुशून्य ज्ञान है, यह कल्पना मात्र है, जैसे शशश्रंग। निद्रा ज्ञान का अभाव मानी जाती है, स्मृति संस्कारजन्य ज्ञान है।

मनुष्य जब दुःख या तनाव में फसता है तो वह अज्ञान व अविद्या के कारण वस्तुओं के मूल स्वरूप को नहीं समझ पाता वह अनित्य, अशुचि, दुःख तथा अनात्म में नित्य शुचि, सुख में आत्मबुद्धि रखते हैं तथा वे विभिन्न प्रकार के क्लेश – अविद्या, अस्मिता, राग द्वेष और अभिनिवेश को भोगते हैं।

इन विभिन्न क्लेशों से ऊबरना और चित्त वृत्ति पर नियन्त्रण करना योग द्वारा बताये गये अष्टांग योग के माध्यम से संभव हो पाता है। योग शरीर, इन्द्रियों और चित्त की शुद्धि के लिए आठ अंगों का वर्णन करता है जिन्हें योगांग भी कहते हैं। योगांगों के अभ्यास से योग की सिद्धि की जा सकती है।² यम, नियम, आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान और समाधि योग के आठ अंग हैं।³

- 1) **यम** – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह यम कहलाते हैं, ये निरोधात्मक सदगुण हैं। अहिंसा का तात्पर्य है कि किसी भी प्राणी से क्रूर व्यवहार न करना। अहिंसा सारे नियमों और शेष यमों का भी आधार है। इसलिए योगशास्त्र में अहिंसा को सबसे ऊपर स्थान दिया गया है। सत्य दूसरा यम है। इसका तात्पर्य है कि सब प्राणियों के हित को ध्यान में रखते हुए जैसा सोचना वैसा ही बोलना। अस्तेय का अर्थ है, मन, वचन और कर्म से किसी अन्य की वस्तु का अपहरण न करना और किसी को उसके उपभोग से वंचित न करना। ब्रह्मचर्य अर्थात् मन, वचन और कर्म से यौन संयम करना, और अपरिग्रह अर्थात् मन, वचन और कर्म से विषय भोगार्थ पदार्थों का संग्रह न करना।
- 2) **नियम** – ये भी पाँच प्रकार के होते हैं – शौच सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान। शौच दो प्रकार के हैं – वाह्य शौच और आभ्यन्तर शौच। शारीरिक स्वच्छता वाह्य शौच है। करुणा, मैत्री, मुदिता के द्वारा राग, द्वेष अस्मिता, माया, असूया इत्यादि मलों को चित्त से निकाल देना आभ्यन्तर शौच है। सन्तोष अर्थात् आवश्यकता से अधिक वस्तुओं के संग्रह की इच्छा न करना; तप अर्थात् भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, सुख-दुःखादि द्वन्द्वों को सहन करना; स्वाध्याय अर्थात् मोक्षशास्त्रों का अध्ययन और मन्त्र जाप, ईश्वर प्राणिधान परमगुरु ईश्वर को सब कर्म अर्पण करना है। इसका मतलब ईश्वर की भक्ति करना नहीं है, ईश्वर की भक्ति समाधि में आती है, नियम विधानात्मक सदगुण या धर्म हैं,⁴ जबकि यम निषेधात्मक है।
- 3) **आसन** – तीसरा योगांग आसन है, शरीर का सुखपूर्वक एक मुद्रा में स्थिर रहना आसन है। आसन में शरीर हिलता नहीं है, न शरीर को कष्ट होता है। आसन अनेक प्रकार के होते हैं, इनके अभ्यास से शरीर स्वस्थ बना रहता है और तंत्रिका तंत्र स्वस्थ रहता है। शरीर का नियन्त्रण योग का आधार है।⁵
- 4) **प्राणायाम** – श्वास-प्रश्वास की स्वाभाविक क्रिया का नियन्त्रण करके उसमें एक नियमित क्रम लाना प्राणायाम है। इसके तीन भाग होते हैं – पूरक, कुम्भक और रेचक। प्राण शक्तियाँ शारीरिक क्रियाओं का संचालन करती हैं। मन

की इच्छाएं और संकल्प शारीरिक क्रियाओं में प्रकट होते हैं। प्राण के नियंत्रण से मन का नियन्त्रण होता है। प्राणायाम से मन की अशुद्धियाँ स्वच्छ होती हैं और ज्ञान का उदय होता है।⁶

- 5) **प्रत्यायाहार** – यह इन्द्रियों का संयम है। इन्द्रियाँ स्वभाव से ही विषयोन्मुख होती हैं। वाह्य विषयों की ओर प्रवृत्त होना उनका स्वभाव है। उनकी बहिर्मुखी प्रवृत्ति को अन्तर्मुखी बनाना, उन्हें वाह्य विषयों से हटाकर भीतर मन के वश में रखना, प्रत्यायाहार कहलाता है। अनवरत् अभ्यास संकल्प और इन्द्रिय निग्रह से प्रत्याहार सिद्ध होता है।⁷

यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार योग के बहिरंग साधन हैं। धारणा, ध्यान और समाधि उसके तीन अन्तरंग साधन हैं। इसमें साक्षात् सम्प्रज्ञात समाधि का लाभ होता है।⁸

धारणा— धारणा का अर्थ है कि चित्त को किसी एक वस्तु पर केन्द्रित करना। वह वस्तु शरीर के अन्दर या बाहर की हो सकती है। नासाग्र, भूमध्य, वाह्य वस्तु जैसे इष्टदेवता मूर्ति पर ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है। आसन शरीर को स्थिर रखता है और प्राणायाम श्वास-प्रश्वास को नियमित करता है, प्रत्याहार इन्द्रियों का नियन्त्रण करता है। धारणा से चित्त का नियन्त्रण होता है। धारणा में चित्त को अन्य वस्तुओं से हटा देना पड़ता है। इससे चित्त में ध्यान की क्षमता आ जाती है।⁹

ध्यान— ध्यान 'प्रत्यय की एकतानता' है अर्थात् उसमें ध्यान की वस्तु का ज्ञान लगातार अविच्छिन्न रूप से होता है और किसी अन्य वस्तु के ज्ञान के कारण उस वस्तु के ज्ञान की धारा नहीं टूटने पाती। अन्य वस्तुओं से हटाकर एक वस्तु पर चित्त को एकाग्र करने से हवस की अवस्था तब पैदा होती है जब उस वस्तु का ज्ञान धारावाहिक रूप से दीर्घकाल तक होता रहता है।¹⁰

समाधि— समाधि की अवस्था में केवल ध्येय वस्तु की ही चेतना रहती है, उस चेतना की चेतना नहीं रहती। समाधि में ध्यान ध्येय वस्तु का आकार ग्रहण कर लेता है। ध्यान और ध्येय की एकता होने पर ध्याता भी ध्येयाकार हो जाता है। समाधि में ध्याता, ध्यान और ध्येय की त्रिपुर में ध्येय ही शेष रह जाता है तथा ध्याता एवं ध्यान ध्येयाकार हो जाते हैं।

समाधि दो प्रकार की होती है – संप्रज्ञात और असंप्रज्ञात। जब समाधि की अवस्था दीर्घकाल तक रहती है तब इसे सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। जब अर्थ का प्रकाश भी नहीं रहता तब उसे असम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। धारणा, ध्यान और समाधि को योग में 'संयम' कहा गया है। ये असम्प्रज्ञात समाधि के अंतरंग-साधन हैं, लेकिन असम्प्रज्ञात समाधि के ये बहिरंग साधन हैं।¹¹

इस अष्टांग योग के अनुष्ठान से चित्त के विकार नष्ट हो जाते हैं। तत्त्व ज्ञान प्राप्त होता है और ज्यों-2 विकार अधिकाधिक नष्ट होते जाते हैं, तत्त्वज्ञान की वृद्धि होती रहती है, यहाँ तक कि अन्त में आत्मा का प्रकृति और उसकी देह, इन्द्रिय, चित्त इत्यादि विकृतियों से भिन्न होने का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। जब क्लेश, अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश नष्ट हो जाते हैं तब चित्त के शुद्ध सत्त्व का प्रकर्ष होता है और वह विवेक ख्याति में परिणत हो जाता है। इसमें चित्त के विकार दूर हो जाते हैं।

निष्कर्ष—योगदर्शन की शिक्षा द्वारा शारीरिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में पूर्णता आती है, क्योंकि यह मात्र शारीरिक व्यायाम न होकर आध्यात्मिक आयाम की भी प्राप्त करता है, इससे विद्यार्थी में आत्मतुष्टि का भाव आता है, वह अपने स्व के परिधि से निकलकर समाज के व्यापक परिधि में शामिल होता है। योगदर्शन का अष्टांग योग विद्यार्थी को तन की सुंदरता एवं स्वास्थ्य के साथ-2 मन का स्वास्थ्य भी प्रदान करता है।

	Think India (Quarterly Journal) ISSN: 0971-1260 Vol-22, Special Issue-08 in collaboration with Indira Gandhi Government Post Graduate College, Bangarmau, Unnao-209868, Uttar Pradesh, India	
--	---	--

वर्तमान में योग की लोकप्रियता एवं आवश्यकता को देखते हुए ही सरकारें इसे स्कूल से लेकर उच्च शिक्षा तक अनिवार्य पाठ्यक्रम में शामिल करने का प्रयास कर रही हैं। योगदर्शन की शिक्षा शारीरिक शिक्षा को सम्पूर्णता प्रदान करती है।

सन्दर्भ:

1. योगश्चित्त वृत्ति निरोधः।
2. योगसूत्र, 1.2.112; योग भाष्य, 1.1
3. वही 2.29
4. योग भाष्य, योग वार्तिक, 2.32
5. योग सूत्र, राजमार्तण्ड, योगभाष्य, 2.46
6. योग सूत्र, 2.49.50.53, योग भाष्य, राजमार्तण्ड, 2-52
7. योग सूत्र, योग भाष्य, योग मार्ग प्रभा, 2.54
8. योग भाष्य, 3.17
9. योग सूत्र, योग भाष्य, योग मणि प्रभा, 3.1
10. योग सूत्र, 3.2, राज मार्तण्ड, 3.2
11. योग मणि प्रभा, 3.3, योग सूत्र योग भाष्य, 3.3.4, 7.8